भाग-ग (समाज)

अन्विति-1

सामाजिक संस्थाओं की परिचालना–संविद् व्यतिक्रम एवं समय अनापकर्म

व्यवहार-पद

धर्मसूत्रों में 'व्यवहार' शब्द का प्रयोग मिलता है, यद्यपि 'व्यवहारपद' अथवा 'व्यवहारस्थान' शब्द का साक्षात् उल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता, और न ही स्मृतियों में 'अष्टादशव्यवहारपद' का ही निर्देश उपलब्ध होता है। तथापि, भिन्न-भिन्न सन्दर्भों से यह प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में व्यवहार का द्विविध विभाजन किया जाता था और स्मृतियों में निर्दिष्ट अष्टादश व्यवहार पदों में से अधिकांश न्यायालयों में विचार के लिये प्रस्तुत किये जाते थे। उत्तरवर्ती काल में व्यवहार के दो वर्ग थे- हिंसामूल और अर्थमूल।

इस विभाजन के दो प्रमुख आधार थे- एक तो यह कि हिंसामूल व्यवहारों में अभियोक्ता के बिना भी न्यायालय स्वतः विषय की छानबीन करके दोषी को दण्डित करता था, जबकि अर्थमूल व्यवहारों में कार्यार्थी का न्यायालय में आकर निर्णय की प्रार्थना करना अनिवार्य था। दूसरे, हिंसामूल व्यवहारों के निर्णय में अपराधी को दण्ड देना ही न्यायलय का प्रमुख उद्देश्य था, जबकि अर्थमूल व्यवहारों में कार्यार्थी किसी न किसी रूप में द्रव्य-प्राप्ति की मांग लेकर प्रस्तुत होता था।

व्यवहार पद के निर्वचन के बाद प्रश्न उठता है व्यवहार के वर्गीकरण का। स्मृतिकारों ने विवादों की गणना की है। अवशिष्ट सारे विवाद इन्हीं में अन्तर्भूत हो जाते हैं। मनु ने विवादों के 18 भेद किए हैं। मिताक्षराकार ने मनूक्तस्त्री-संग्रहण और स्त्रीपुंधर्म को व्यवहार में नहीं माना है, उसे आचार प्रकरण में अन्तर्भूत कर दिया है। उन्होंने उनके बदले अभ्युपेत्य शुश्रूषा एवं प्रकीर्णक को जोड़ दिया है और क्रय-विक्रयानुशय को दो भागों में बांट दिया है। इस तरह उनके मत में 20 व्यवहार होते हैं। कौटिल्य ने 16 भेद माने हैं। बृहस्पति ने 19 भेद किए हैं। नारद ने इन्हीं मनुनिर्दिष्ट व्यवहारों की संख्या 108 कर दी है ओर उसे शतशाख बतलाया है-

Scanned with CamScanner

मनु के द्वारा निदि 'ष्ट व्यवहार-

1. ऋणादान - ऋण लेना।
2. निक्षेप - धरोहर रखना।
3. अस्वामिविक्रय - मालिक से अतिरिक्त व्यक्ति द्वारा किसी वस्तु को बेच देना।
4. सम्भूय समुत्थान - कम्पनी के रूप में काम करना।
5. दत्तस्यानपाकर्म - दिए हुए धन को अपात्र समझकर या क्रोध से लेना।
6. वेतनादान - नौकरों को वेतन नहीं देना।
7. संविद् व्यतिक्रम - किए हुए नियम का उल्लंघन।
8. क्रयविक्रयानुशय - खरीद-बिक्री के बाद पश्चाताप के कारण झंझट।
9. स्वामिपाल विवाद - मालिक एवं पशुपालक का झगड़ा।
10. सीमा-विवाद - सीमा का झगड़ा।
11. वाकपारूष्य - तर्जन, भर्त्सन आदि।
12. स्तेय - चोरी।
13. दण्डपारूष्य - मारपीट।
14. साहस - जबर्दस्ती धन छीनना आदि।
15. स्त्री-संग्रहण - स्त्री का पर पुरूष से संपर्क।
16. स्त्री-पुंधर्म - स्त्री पुरुष की धर्म व्यवस्था।
17. विभाग - दायभाग-पैत्रिक धन का बंटवारा।
18. द्यूतसमाह्वय - जूआ में शर्त से खेलना एवं तत्सम्बन्धी झगड़े।

प्राचीन काल में प्राचीन शास्त्रों में सबसे अधिक प्रचलित शब्द दो ही हैं- 'व्यवहारपद' तथा 'विवादपद'। कौटिल्य और नारद ने अभियोग के लिए विवादपद शब्द का प्रयोग किया है। मनु ने 'पद' का अर्थ स्थान किया है। इस तरह विवादपद शब्द का अर्थ हुआ मुकदमे का स्थान अर्थात् विषय। मिताक्षरा में भी पद का अर्थ स्थान विषय एवं निमित्त किया गया है। फलतः व्यवहार पद का अर्थ हुआ झगड़े के स्थान, विषय या कारण।

Scanned with CamScanner

मनु ने सारे विवादों को 18 भागों में बांटा है और अन्य विवादों को इसी में अन्तर्भावित किया है।

अन्य स्मृतिकारों ने भी भिन्न-भिन्न ढ़ंग से अभियोगों के भेद किए हैं तथा अपने मतानुसार उनकी व्याख्या प्रस्तुत की है। इनमें सबसे अधिक वैज्ञानिक, क्रमबद्ध एवं विस्तृत व्याख्या मिताक्षराकार ने की।

१. ऋणादान - इसके अन्तर्गत ऋण सम्बन्धी सारे विवाद आ जाते हैं। यह ऋण भी दो प्रकार का होता है- सबन्धक और अबन्धक। जिस ऋण के लेने पर कोई वस्तु बन्धक में रखी जाती है, उसे सबन्धक ऋण कहते हैं।

२. उपनिधि- उपनिधि धरोहर को कहते हैं। धरोहर रखी गई वस्तु यदि राजा, दैव और चोर के द्वारा अपहृत कर ली जाए तो उसे लौटाना आवश्यक नहीं होता था। विवाहादि के अवसर पर जो चीज मांगकर लाई जाए उसे याचित कहते हैं। याचित, अन्वाहित, न्यास तथा निक्षेप में भी वह न्याय बरता जाता था जो उपनिधि के सम्बन्ध में बरता जाता था।

३. दायविभाग- दाय दो प्रकार का होता है- अप्रतिबन्ध और सप्रतिबन्ध। पिता का धन पुत्र को या पितामह का धन पौत्र को स्वत: प्राप्त हो जाता है। अत: इसे अप्रतिबन्ध कहते हैं। चाचा या भाई का पुत्राभाव में जो धन प्राप्त होता है, उसे सप्रतिबन्ध दाय कहते हैं। आधुनिक हिन्दू कानून (हिन्दू लॉ) भी इसी पर आधारित है।

४. सीमा विवाद- सीमा के चार भेद होते हैं- जनपद सीमा, ग्रामसीमा, क्षेत्रसीमा और गृहसीमा। सीमा पांच प्रकार से निर्धारित की जाती थी। (१) **ध्वजिनी** - पेड़ पौधों के द्वारा (२) **मत्स्यिनी** - नदी आदि की धारा के द्वारा (३) **नैघानी** - जमीन के नीचे भूसी अंगार आदि गाड़कर (४) **भय-वर्जिता** - मुद्दई के तथा मुदालह की पारस्परिक सहमति से तथा (५) **राज-निर्मिता** - राजा के द्वारा निर्धारित।

५. स्वामिपालविवाद - चरवाहा किसी की फसल को चरा देता है और उसके सम्बन्ध में खेत का मालिक जो मुकदमा करता है वह इस प्रकरण में आता है।

Scanned with CamScanner

६. **अस्वामिविक्रय** - स्वामी से बिना पूछे उसके समक्ष दूसरे व्यक्ति द्वारा उसकी चीज को बेच देना अस्वामिविक्रय कहलाता है।

७. **दत्ताप्रदानिक** - अविहित रूप से धन देकर कोई व्यक्ति उसे फिर लेना चाहता है- इससे सम्बद्ध अभियोग को दत्ताप्रदानिक या दत्तानपकर्म कहते हैं। नारद ने इसके चार भेद किए हैं- देय, अदेय, दत्त तथा अदत्त।

८. **क्रीतानुशय** - क्रीतानुशय का अर्थ होता है कोई वस्तु खरीदकर बाद में इस बात पर पश्चात्ताप करना कि इस वस्तु के खरीदने से मुझे घाटा लग गया या खौटा माल मिल गया। क्रेता उसी दिन उस वस्तु को अधिकृत रूप में लौटा सकता है। भिन्न-भिन्न वस्तुओं के क्रय एवं प्रत्यर्पण सम्बन्धी विवादों की समीक्षा की गई है।

९. **आन्युपेत्याशुश्रूषा** - स्वीकार करके किसी की सेवा नहीं करना आन्युपेत्याशुश्रूषा कहलाता है। शिष्य, अन्तेवासी, भृतक अधिकर्मकृत् तथा दास।

१०. **संविद्व्यतिक्रम** - राजा अपने नगर में घर बनाकर उनमें ब्राह्मणों को रख दे और त्रिवेदज्ञ ब्राह्मणों को जमीन, सुवर्ण आदि देकर कह दे कि आप लोग श्रुतिस्मृति विहित अपने धर्म का पालन करें। उन नियमों के उल्लंघन करने पर उन पर जो अभियोग चलाया जाता है उसे संविद्व्यतिक्रम कहते हैं।

११. **वेतनादान** - नौकरों के वेतन देने और नहीं देने से सम्बन्धित झगड़ों को वेतनादान कहते हैं।

१२. **द्यूतसमाह्वय**- पाशा, शतरंज की गोटियां इन प्राणहीन वस्तुओं से शर्तपूर्वक जो क्रीडा की जाती है, उसे द्यूत कहते हैं और मुर्गे, कबूतर, भेड़, भैंस आदि प्राणियों से जो क्रीड़ा शर्तपूर्वक की जाती है, उसे समाह्वय कहते हैं। इनसे सम्बद्ध विवाद को द्यूतसमाह्वय कहते हैं।

१३. **वाक्यपारुष्य**- देश, जाति एवं कुल की जोर से बोलकर निन्दा एवं अश्लील वचन कहने को वाक्पारूष्य कहते हैं।

Scanned with CamScanner

१४. दण्डपारूष्य- हाथ, पैर, शस्त्र, पत्थर, ढ़ेला, दूसरे के शरीर पर प्रहार करने को दण्डपारूष्य कहते हैं।

१५. साहस- किसी सर्वसाधारण या परकीय वस्तु के जबर्दस्ती अपहरण को साहस कहते हैं। राजदण्ड या जननिन्दा की परवाह नहीं करके किसी को मारना, हरण करना, दूसरे की स्त्री को अपमानित करना साहस कहलाता है।

१६. विक्रीयासम्प्रदान- कोई वस्तु किसी के हाथ में बेचकर उसे खरीदने वाले के हाथ में नहीं देना विक्रीयासम्प्रदान कहा जाता है।

१७. संभूय-समुत्थान- व्यापारी, नट, आदि मिलकर लाभ की इच्छा से जो काम सम्मिलित रूप से करते हैं, उनमें जो जितना धन देता है अथवा जितने का अंश खरीदता है, उसमें गड़बड़ी होने पर जो विवाद खड़ा होता है अथवा उससे प्राप्त लाभ या घाटे के बंटावारे में जो झगड़ा पैदा होता है, उसे सम्भूय समुत्थान कहते हैं।

१८. स्तेय- स्तेय का अर्थ चोरी होता है। जो वस्तु द्रव्य के स्वामी के परोक्ष में छल से ले ली जाती है, उसे स्तेय (चोरी) कहते हैं।

संविद् व्यतिक्रम-

संघ बनाकर काम करने का उल्लेख वेदों में पाया जाता है। देवताओं मे भी मिल जुलकर काम करने की प्रथा थी। मिल जुलकर सामूहिक रूप में काम करने को ही संविद् कहते हैं। ऋग्वेद में एक मन्त्र का उल्लेख-

त्वं सोम पितृभिः संविदानोऽनुद्यावापृथिवी आततन्थ अर्थात् सोम और पितर दोनों मिलकर स्वर्ग और पृथ्वी का विस्तार करते हैं। औषधियों के मिलजुल कर काम करने का वर्णन वेदों में पाया जाता है। साथ चलना, साथ बोलना, एक मन का होना इस बात को बताने वाला एक मन्त्र बहुत प्रसिद्ध है-

सं गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते। (ऋग्वेद, 10.191.2)

एक मन्त्र में इन्द्र से प्रार्थना की गई है कि वे अपने लोगों से तथा प्रतिकूल व्यक्तियों से मुझे ऐकमत्य प्राप्त करा दें। बहुत से व्यक्ति मिलकर

Scanned with CamScanner

जो एक शर्त या निय म बनाते हैं, उसे **संविद्** कहते हैं और उसके उल्लंघन को **संविद् व्यतिक्रम** कहते हैं। प्राचीन काल में मिलजुलकर एक नियम निर्धारित कर काम करने की प्रथा थी और उस नियम का अतिक्रमण करने वाले को अवश्य दण्ड दिया जाता था। धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में संविद् व्यतिक्रम के विषय में उल्लेख है-

राजा अपने नगर में घर बनाकर उसमें वैदिक विद्वानों (ब्राह्मणों) को रख दे और उनको भूमि, आवासादि समस्त व्यवस्था देकर कह दे कि आप लोग श्रुतिस्मृति विहित अपने धर्म का पालन करें। उन नियमों के उल्लंघन करने पर जो अभियोग चलाया जाता है उसे संविद् व्यतिक्रम कहते हैं। नारद ने इसमें पाखण्डियों द्वारा की गई शर्त के उल्लंघन को भी समाविष्ट किया है।

पाखण्डनैगमादीनां स्थितिः समय उच्चते।
समयस्यानपाकर्म तद् विवादपदं स्मृतम्॥

– ना. स्मृ 13/1 मिताक्षरा 2/185

याज्ञवल्क्य ने पण्यशिल्पियों, पाखण्डियों एवं शस्त्रजीवियों या एक पेशावालों के समूह के नियम के उल्लंघन को इस विवाद में समाविष्ट किया है। मनु ने इसे प्रतिज्ञा विरूद्धता कहा है-

अतः ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि धर्मं समय भेदिनाम्।

अर्थात् अब की हुई प्रतिज्ञा या व्यवस्था को तोड़ने वालों के लिए नियम कहता हूँ।

यो ग्रामदेशसंघानां कृत्वा सत्येन संविदम्।
विसंवदेन्नरो लोभान्तं राष्ट्राद्विप्रवासयेत्।

जो मनुष्य गांव, देश या किसी समुदाय कम्पनी आदि से इकरार करके फिर लोभ के कारण उसे भंग कर देवे राजा को चाहिए कि उसे राष्ट्र से बाहर निकाल दे।

निगृह्य दापयेच्चैनं समयव्यभिचारिणाम्।
चतुः सुवर्णाम्पणिष्कांश्छतमानं च राजतम्।

और इस प्रतिज्ञा या व्यवस्था को भंग करने वाले को अपराध के स्तर

Scanned with CamScanner

के अनुसार पकड़ कर चार सुवर्ण, छह निष्क, चान्दी का शतमान दण्ड देना चाहिए।

एतद्दण्डविधिं कुर्याद्धार्मिकः पृथिवीपतिः।
ग्रामजातिसमूहेषु समयव्यभिचारिणाम्।।

धार्मिक राजा को चाहिए कि गांव, वर्ण और समुदाय-सम्बन्धी विषयों में प्रतिज्ञा या व्यवस्था का भंग करने वालों पर उपर्युक्त दण्ड का विधान करे।

संविद्व्यतिक्रमः

राजा अपने नगर में घर बनाकर उनमें ब्राह्मणों को रख दे और त्रिवेदज्ञ ब्राह्मणों की जमीन, सुवर्ण आदि देकर कह दे कि आप लोग श्रुतिस्मृति विहित अपने धर्म का पालन करें। उन नियमों के उल्लंघन करने पर उन पर जो अभियोग चलाया जाता है उसे **संविद्व्यतिक्रम** कहते हैं। नारद ने इसमें पाखण्डियों द्वारा की गई शर्त के उल्लंघन को भी समाविष्ट किया है। मनु ने ग्राम, देश एवं संघ के साथ की नई शर्त के लोभवश उल्लंघन को भी इसमें समाविष्ट किया है। याज्ञवल्क्य ने भी पण्यशिल्पोपजीवियों, नैगमों (पाशुपतमतानुयायियों) आदि पाखण्डियों एवं शस्त्र-जीवियों या एक ही पेशा वालों के समूह के नियम के उल्लंघन को भी इस विवाद पद में समाविष्ट किया है।

नारद (13/1) ने इसके लिए समयस्यानपाकर्म का प्रयोग किया है, मनु (8/5) ने प्रथम शब्द का प्रयोग किया है। किन्तु मनु (8/298-219) में दोनों नामों की ओर संकेत मिलता है, यथा- "अब मैं उन नियमों की व्यवस्था दूंगा जो समयों (परम्पराओं या रूढ़ियों) के व्यतिक्रम-कर्ताओं के लिए प्रयुक्त होते हैं। जो किसी ग्राम के या जिले के निवासियों या व्यापारियों के किसी दल या किसी अन्य प्रकार के लोगों के साथ शपथ लेकर संविद् में आता है और (आगे चलकर) इसका लोभवश अतिक्रमण करता है, वह राजा द्वारा देश-निष्कासन का दण्ड पाता है।" आपस्तम्बधर्मसूत्र (1.1.1.20) में 'समय' शब्द रूढ़ि या अंगीकृत सिद्धान्त के अर्थ में आया है (न्यायवित्समय)। यह शब्द समझौते (एग्रीमेन्ट) के

अर्थ में भी लिया गया है (याज्ञ.1.61) यथा 'गान्धर्वः समयान्मिथः।' जैसे के मेधातिथि (मनु 8.219) ने व्याख्या की है, इसका अर्थ है "बहुत से लोगों द्वारा किसी विशिष्ट नियम या रूढ़ि या परम्परा का अंगीकार करना।" इससे संकेत मिलता है कि वह नियम किसी दल (संघ या गण) द्वारा अंगीकृत स्थानीय या जातीय प्रचलन से सम्बन्धित होना चाहिए जो दल के सभी सदस्यों को मान्य हो या उन्हें एक सूत्र में बांधे रखता हो। अमरकोश ने आचार एवं संविद् को समय के पर्यायों में गिना है (समयः शपथाचारकालसिद्धान्तसविदः)। मेधातिथि (मनु 8/219-220) ने लिखा है कि यदि किसी ग्राम के वासी यह निर्णय करें कि यदि पड़ोसी ग्राम के लोग उनके खेतों या चरागाहों में अपने पशु लायें या नहरों को अपनी ओर घुमा लें तो वे उनको रोकेंगे तथा ऐसा करने पर यदि मारपीट हो जाये या राजा के यहाँ मुकदमा चलना आरम्भ हो जाये तो सभी एकमत रहेंगे तो उस व्यक्ति को दण्ड देंगे जो दूसरे ग्राम के मुखिया की ओर मिल जाये तथा विपक्षी की सहायता करे।

नारद (13.1) के मत से नास्तिकों, नैगमों आदि द्वारा निश्चित नियम (परम्पराएं) 'समय' के उदाहरण हैं। याज्ञ. (1.192), नारद (13.2) का कथन है कि राजा द्वारा पुरों एवं जनपदों के संघों, नैगमों, नास्तिकों, श्रेणियों, पूगों, गणों के नियमों (परम्पराओं या रूढ़ियों) की रक्षा होनी चाहिए और उन्हें कार्यान्वित करना चाहिए। **संघों** की मान्यताएं (समय-क्रिया) स्मृतिचन्द्रिका (2, पृ. 223) ने विभिन्न समूहों के समयों पर मनोरंजक प्रकाश डाला है जिसे व्यवहार प्रकाश (पृ. 332-333) ने ज्यों-का-त्यों ले लिया है। उसका कहना है कि नास्तिक (पाषण्डी) लोग भी अपने मठों के लिए नियम बनाते हैं। **नैगमों** में एक नियम ऐसा है कि जो लोग किसी विशिष्ट वस्त्र से युक्त नौकरों के संदेश की परवाह नहीं करते वे दण्डित होते हैं। **श्रेणी** शब्द जुलाहों के समान अन्य शिल्पियों के समूह का द्योतक है। उनके ऐसे नियम हैं कि कुछ वस्तुएं केवल एक दल बेच सकता है अन्य नहीं। **पूग** हाथियों एवं घोड़ों के सवारों के दल को कहते हैं। कात्यायन ने **व्रात** को विभिन्न प्रकार के हथियारों से लैस

Scanned with CamScanner

व्यक्तियों के समूह को कहा है। महाभाष्य (पाणिनि 5.2.21) ने इसे उन लोगों का दल माना है जो विभिन्न जातियों एवं वृत्तियों के होते हैं और अपने शक्तिशाली (बलिष्ठ) शरीर पर आश्रित होते हैं।

स्मृतिचन्द्रिका के मत से पूगों एवं ब्रातों में एक ऐसी परम्परा या नियम या समय कि उन्हें एक साथ समर में जाना चाहिए पृथक्-पृथक् नहीं। गणों में एक ऐसी परम्परा है कि बच्चों के कान पांचवें दिन या पांच वर्षों के उपरान्त छेदे जाने चाहिए। ब्राह्मणों की एक पुरी (बस्ती) के महाजनों में एक ऐसा नियम (परम्परा या समय) है कि यदि कोई ब्राह्मण वैदिक शिक्षा के उपरान्त गुरू-दक्षिणा का धन एकत्र करने के लिए उनके यहां जाय तो उसका सम्मान करना चाहिए (अर्थात् उसे चन्दा देना चाहिए)। कुछ जनपदों में ऐसा समय (प्रचलन) है कि क्रेता या विक्रेता अपने हाथ में मूल्य का दशांश रख लेता है (सम्भवतः यह जानने के लिए कि वस्तु उपयोगी है या नहीं और अनुपयोगी सिद्ध होने पर वह वस्तु को लौटा देता है।) दुर्गों या राजधानियों में एक समय ऐसा है कि बाहर जाते समय यदि कोई साथ में अन्न ले जाए तो उसे बेचे नहीं। ग्रामों में ऐसा समय है कि चरागाह न खोदे जाएं। आभीर के ग्रामों में ऐसा समय है कि स्त्री या पुरूष के व्यभिचार के लिए दण्ड न लगे।

धर्मशास्त्रकार इतने उदार थे कि उन्होंने पाषण्डियों के समयों के पालन के लिए भी राजा को उद्वेलित किया था। केवल इस बात का ध्यान रखा गया था कि समयों का पालन राज्य या राजधानी के विरोध में न जाये और क्रांति न उत्पन्न होने पाये और न अनैतिकता प्रदर्शित हो सके (नारद 9314-5 एवं 7, मेधाातिथि, मनु (81220)। याज्ञवल्क्य ने नियम दिये हैं- संघों, श्रेणियों आदि के व्यापार-कार्य को देखने के लिए कोई सभा (बृहस्पति के अनुसार दो, तीन या पांच व्यक्तियों की) होनी चाहिए। इन सभाओं के सदस्य धार्मिक, पवित्र, आलोभी होना चाहिए और नियमों के अनुसार कार्य करना चाहिए।

Scanned with CamScanner